पेरिस
१२ दिसम्बर, २००६

संदेश संख्या – १८०

एक वार्ता

शिष्य : फोन–वार्ता पर हो रहे सत्संग के दौरान गहन स्वाध्याय घटित हुआ । फोन वार्ता समाप्त होते ही अचानक समझदारी घटित हुई जो इस प्रकार है :

१. तथाकथित व्यक्तिगत मानवीय चित्तवृत्ति मुख्यतः दो चीजों से बनी है – (i) मूलभूत मानवीय चित्तवृत्ति और (ii) शरीर की लक्षण एवं प्रवृत्तियाँ (जीन, गुण) । इस मानवीय चित्तवृत्ति को उसकी सम्पूर्णता में समझना ही स्वाध्याय है ।

विभेदकारिता रूपी अनोखा मानवीय गुण और इस विभेदकारिता को सतत् बनाये रखने की इच्छा, मूल चित्तवृत्ति का मुख्य गुण है । शरीर के गुण (लक्षण एवं प्रवृत्तियाँ) इसी मूल चित्तवृत्ति पर आश्रित होते हैं तथा इसे केवल कुछ हद तक ही प्रभावित करते हैं । जब तक मूल चित्तवृत्ति विभेदकारिता से शासित होती है तब तक जागरूकता की अवस्था में होना सम्भव नहीं । फिर भी, यदि कभी इस विभेदकारिता का बन्धन टूट जाय तब अचानक चित्तवृत्ति के मूलभूत गुणों में मौलिक परिवर्तन हो जाता है । यह मौलिक परिवर्तन उसका क्रमिक विकास नहीं है । इस मौलिक परिवर्तन के फलस्वरूप विचारों की सततता रूपी चित्तवृत्ति का गुण विचार शून्यता में बदल जाता है । यह विचारों में स्थिरता लाना नहीं है बल्कि स्थिर करने हेतु तब कोई विचार ही नहीं होता ।

२. बात करने की आवश्यकता तभी पड़ती है जब निरन्तर प्रवाहमान विचारों को अभिव्यक्त करना होता है । विचारों का प्रवाह यदि जारी है तो उसकी शाब्दिक अभिव्यक्ति हो या नहीं हो, यह महत्वपूर्ण नहीं है । वस्तुतः वे दोनों एक ही हैं । उच्चारण जोर से हो या मन ही मन हो, इससे कोई अन्तर नहीं पड़ता। विचारों के लगातार जारी होने पर, उनकी स्पष्ट शाब्दिक अभिव्यक्ति नहीं होने पर भी शान्ति नहीं होती । लेकिन विचारों की सतत चलने वाली धारायें जब रुक जाती हैं और तब जो शाब्दिक अभिव्यक्ति होती है वह शान्ति से उत्पन्न होती है । वैसी अवस्था में, शाब्दिक अभिव्यक्ति के समय ही विचार होता है (तकनीकी रूप से, यह शान्ति की ऊर्जा को शाब्दिक अभिव्यक्ति में रूपान्तरित करता है) लेकिन जब शाब्दिक अभिव्यक्ति नहीं होती तब केवल सजगता होती है, शायद यही जागृति शान्ति है ।

३. जब तक वक्ता और श्रोता, दोनों गहन जागरण की अवस्था में नहीं हों, सत्संग नहीं हो सकता । जब शान्ति नहीं होती, तब समझदारी भी नहीं होती और न ही वर्तमान का बोध । शायद विचार की अवस्था से जागृति की अवस्था में यह मौलिक परिवर्तन घटित होता है । इसीलिए आप इसे कृपा कहते हैं ।

गुरु – यही सत्संग की मौलिक परिवर्तनकारी गतिशीलता है जो मनुष्य शरीर में पवित्र कृपा (न कि पवित्र भूत) को प्रकट करती है और वर्तमान में यह श्रावक–अवस्था (बौद्ध मुहावरा) या श्रवण कुमार अवस्था (हिन्दू–मुहावरा) को उपलब्ध है । स्वतंत्रता, जीवन्त–समझदारी एवं प्रेम के आयाम में । यही पूर्ण श्रवण है। ''मैं'' का सुनना कभी पूर्ण नहीं होता, सदैव खण्डित होता है । तुम्हारा शरीर इस प्रक्रिया को किसी तरह अभिव्यक्त कर पा रहा है और इसी कारण यह शरीर रो नहीं रहा । लेकिन अजय का शरीर गुरू–शरीर से निकले स्वाध्याय की वाणी को सुनकर अत्यधिक अश्रुपात करता है, क्योंकि उसके पास इसकी शाब्दिक अभिव्यक्ति की पर्याप्त दक्षता नहीं ।

इस तरह शायद, मौलिक परिवर्तन शाब्दिक अभिव्यक्ति के साथ और इसके बिना भी होता है ।

।। जय गुरु प्रक्रिया ।।